International Journal of Academic Research and Development
ISSN: 2455-4197, Impact Factor: RJIF 5.22
www.academicsjournal.com
Volume 2; Issue 3; May 2017; Page No. 329-333

बृहत्त्रयी में स्थान के आधार पर वन का वर्णन

डॉ0 निशा
पी-एच.डी. संस्कृत, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, समरहिल, शिमला, हिमचाल प्रदेश, भारत।

1. प्रस्तावना

संस्कृत साहित्य अत्यन्त विस्तृत है। बृहत्त्रयी शब्द संस्कृत साहित्य में बहुत प्रचलित रहा है। बृहत्त्रयी के अन्तर्गत तीन महाकाव्य सम्मिलित हैः- किरातार्जुनीय, शिशुपालवध तथा नैषधीयचरित। महाकवि भारवि ने किरातार्जुनीय, महाकवि माघ ने शिशुपालवध तथा श्रीहर्ष ने नैषधीयचरित महाकाव्य की रचना की है। त्रयी का अर्थ है - तीन काव्य। इन तीनों काव्य के लिए बृहत् शब्द का प्रयोग उनकी काव्य सम्पत्ति तथा कलेवर-सम्पत्ति दोनों को ही ध्यान में रखकर किया गया है। बृहत्त्रयी में अनेक प्रकार के विषय का वर्णन किया गया है। इन्हीं विषयों में प्रमुख विषय वनों का है। बहृत्त्रयी में विभिन्न प्रकार के वनों का अति सुन्दर वर्णन किया गया है।

2. वन का अभिधेयार्थ

एक ऐसा स्थान जहाँ बहुत दूर तक हर जगह पेड़ ही पेड़ हो वन कहलाता है।[1] एक मत के अनुसार आर्य वैदिक गाँव और जनपदों में निवास करते थे। वहाँ गाँव और जनपदों से बाहर वन भी होते थे। वनों से अनेक समिधाएँ तथा नाना प्रकार की लकड़ियाँ प्राप्त होती थी।[2] ऐसा कहा जाता है कि अरण्य गृह और कृषि से दूर होता है। अरण्य शब्द ग्राम के बाहर कृषि-रहित प्रदेश को उद्दिष्ट करता है।[3] किरातार्जुनीय महाकाव्यानुसार सुराङ्गनाएँ वृक्षों की छाया में निवास करती हैं और वन में विहार करने की इच्छा से स्वर्ग को त्याग देती है।[4] सुराङ्गनाओं की शरीर शोभा से जङ्गली वनस्पतियाँ प्रकाशित होने लगती हैं।[5] शिशुपालवध के उल्लेखानुसार वन के वृक्ष लोगों के श्रम को दूर करते हैं।[6]

कादम्बरी के अनुसार वन में कन्द-मूल और जल उत्पन्न होता है और उससे जीवनयापन होता है।[7] कालिदास ने वन में गोचारण करते हुए राजा दिलीप का बाललताओं द्वारा पुष्प-वर्षा से आतिथ्य होना चित्रित किया है।[8] माघ वर्णन करते हैं कि तीव्र वायु द्वारा पुष्पों तथा पल्लवों से हिलती हुई मोटी-मोटी लताओं से युक्त वन अत्यन्त सुशोभित होता है।[9] नैषध में श्रीहर्ष उल्लेख करते हैं कि वन की रमणीयता को देखकर राजा नल अत्यन्त प्रसन्न हो जाते हैं।[10] वन में फल-फूलों से सम्पन्न पल्लवकरों द्वारा पुराने वृक्ष राजा नल का स्वागत करते हैं। वन की वायु भी राजा नल की सेवा करती है।[11] ऐसा कहा जाता है कि वसन्त ऋतु के चले जाने (बीत जाने) पर वन श्री-हीन (शोभाहीन) हो जाता है।[12] बृहत्त्रयी में स्थान, वृक्षों तथा लताओं की प्रधानता के आधार पर वनों का उल्लेख किया गया है।

3. बृहत्त्रयी में स्थान की प्रधानता के आधार पर वर्णित वन

बृहत्त्रयी में स्थान की प्रधानता के आधार पर खाण्डव वन, चैत्ररथ वन, दण्डक वन, द्वैत वन, नन्दन वन तथा वृन्दावन आदि अनेक प्रकार के वनों का उल्लेख किया गया है जिनका वर्णन निम्न प्रकार से है -

3.1 खाण्डव वन

दिल्ली के आस-पास का एक पुराना वन है।[13] नागराज तक्षक का निवास स्थान कुरुक्षेत्र और खाण्डव वन रहा है। तक्षक और अश्वसेन इस वन में सदा साथ में विचरते रहते थे।[14]

ऐसा कहा जाता है कि राजा श्वेतकि के यज्ञ में अग्नि ने लगातार बारह वर्षों तक घृतपान किया था जिससे अग्निदेव के उदर में विकार हो गया था। वे तेज से हीन होकर ग्लानि को प्राप्त होने लगे।[15] तब अग्निदेव ब्रह्मा जी के पास सहायता के लिए गए और ब्रह्मा जी ने कहा कि खाण्डव वन में सब प्रकार के जीव-जन्तु आकर रहने लगे हैं। उन्हीं के मेद से तृप्त होकर तुम स्वस्थ हो सकोगे।[16] ब्रह्मा ने अग्नि को अर्जुन और कृष्ण की सहायता लेने का परामर्श दिया। इन्द्रादि देवताओं से रक्षित होने पर तुम खाण्डव वन को जला सकोगे।[17] अग्निदेव ने श्रीकृष्ण और अर्जुन के द्वारा इन्द्र के आक्रमण से सुरक्षित रहकर खाण्डव वन को पंद्रह दिनों तक जलाया।[18] उस वन को जलाते समय अग्नि ने अश्वसेन नाग को नहीं जलाया क्योंकि तक्षक पुत्र अश्वसेन को उसकी सर्पिणी माता ने निगलकर आग से बचा लिया था।[19] भागवतपुराणानुसार खाण्डव वन का भोजन मिल जाने से अग्निदेव बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने अर्जुन को गाण्डीव धनुष, चार श्वेत घोड़े, एक रथ, दो अटूट बाणों वाले तरकस और एक ऐसा कवच दिया जिसे कोई अस्त्र-शस्त्रधारी भेद न सके।[20] कादम्बरी में अग्निदेव द्वारा खाण्डव वन को जलाने का संकेत किया गया है।[21] एक अन्य स्थल पर इस कार्य हेतु अर्जुन द्वारा अगिन की सहायता करना चर्चित है।[22]

किरातार्जुनीय महाकाव्य में खाण्डव वन दहन का उल्लेख दो स्थलों पर किया गया हैं एक स्थल पर महाकवि उल्लेख करते हैं कि सूकर (वराह) को अपनी ओर आता देख अर्जुन बोलता है कि तक्षकपुत्र अश्वसेन के बन्धु बान्धवों को खाण्डव वन की अग्नि से जला दिया गया था और कहीं वह आज क्रोधित होकर मुझसे बदला लेने के लिए तो नहीं आ रहा होगा।[23] एक अन्य स्थल पर महाकवि उल्लेख करते हैं कि अर्जुन किरात सेना के किसी सैनिक से कहता है कि खाण्डव वन को जलाने के अभिलाषी अग्निदेव ने मुझे असंख्य बाण दिये हैं। मैंने देवताओं के बाणों को लेने की इच्छा नहीं की तो इस पर्वतीय किरात के बाणों को तो मैं कभी भी नहीं लूँगा।[24] नैषधचरित के अनुसार धनञ्जय अर्जुन ने अग्नि के कारण खाण्डव दहन में सब कुछ पा लिया था।[25]

3.2 चैत्ररथ वन

चैत्ररथ वन कुबेर का वह उपवन या बगीचा है जो चित्ररथ ने बनवाया था।[26] यह अति विशाल एवं दुर्गम वन था।[27] चैत्ररथ वन उत्तरकुरु वर्ष में स्थित है चैत्ररथ वन में सभी ऋतुओं में सदा फल लगे रहते हैं।[28] केकय से लौटते समय भरत ने इस वन को पार किया था।[29] रावण ने कुबेर के दिव्य चैत्ररथ वन का विनाश किया था।[30] भागवतपुराणानुसार चैत्ररथ नामक वन में देवगण अनेकों सुरसुन्दरियों के साथ विहार करते हैं।[31] नैषधचरित के उल्लेखानुसार चैत्ररथ नामक वन कुबेर का वन है। यह उत्तर दिशा में है। उत्तर दिशा भी कुबेर की दिशा है। वहाँ कस्तुरी मृग पाये जाते हैं। अन्धकार को कस्तुरी के समान काला माना गया है। इसलिए अन्धकार की तुलना हिमालय के अयश से की गयी है क्योंकि सूर्य द्वारा अवमानित होने पर हिमालय का अनादर हुआ और वह अयश का पात्र बना। वही हिमालय का काला अयश उत्तर दिशा में अन्धकार बनकर फैल रहा है।[32]

3.3 दण्डक वन
यह एक प्रसिद्ध वन है और बहुत बड़ा वन है जो विन्ध्यपर्वत और गोदावरी नदी के बीच में स्थित है।[33] ऐसा कहा जाता है कि यह प्रसिद्ध तीर्थ स्थान था। यहां अनेक जलकुंड, आश्रम और पहाड़ी सरिताएँ थी।[34] दण्डक वन में महर्षि अगस्त्य का आश्रम था।[35] दण्डकारण्य में मुनियों ने अनेक शाप दिए थे।[36] महाभारत के उल्लेखानुसार दण्डकारण्य में स्नान करने मात्र से सहस्र गोदान का फल प्राप्त होता है।[37]

ऐसा कहा जाता है कि दशरथनन्दन श्रीराम अपने पिता की आज्ञा का पालन करने के लिए अपनी पत्नी सीता और छोटे भाई लक्ष्मण के साथ दण्डकारण्य में आये। दण्डकारण्य में आकर वे जनस्थान में रहते थे। एक दिन दुरात्मा राक्षसराज रावण की आज्ञा से मारीच राक्षस ने अपनी माया से सुवर्ण और रत्नमय विचित्र मृग का रूप धारण करके श्रीराम को धोखे में डाल दिया। तब रावण ने श्रीराम की पत्नी सीता का छल द्वारा बलपूर्वक हरण कर लिया।[38] शिशुपालवध महाकाव्य में दण्डकारण्य से रावण द्वारा सीता के अपहरण का उल्लेख किया गया है।[39]

3.4 द्वैत वन
द्वैत नामक झील के कारण इस अरण्य भाग का नाम द्वैत वन पड़ा।[40] यह वन सरस्वती नदी के तट पर स्थित है।[41] महाभारतानुसार वनवासकाल के समय अर्जुन युधिष्ठिर से कहते हैं कि यह जो पवित्र जल से भरा हुआ सरोवर है इसका नाम द्वैत वन है। यहाँ फल-फूलों की बहुलता है। यह देखने में अत्यन्त रमणीय है तथा अनेक ब्राह्मणों से सेवित है। मेरी इच्छा है कि हम लोग इन बारह वर्षों तक इसी वन में निवास करें।[42] युधिष्ठिर भी अर्जुन की बात से सहमत होते हैं। तब सभी धर्मात्मा पाण्डव बहुत से ब्राह्मणों के साथ पवित्र द्वैत वन को जाते हैं।[43] इसी द्वैत वन में सभी भाईयों ने सर्दी-गर्मी और आँधी आदि का कष्ट भोगा।[44] महाकवि भारवि उल्लेख करते हैं कि महाराज युधिष्ठिर ने अपने चारों भाईयों और पत्नी द्रौपदी के साथ द्वैत वन में निवास किया था।[45]

3.5 नन्दन वन
स्वर्ग में स्थित इन्द्र का प्रसिद्ध उपवन या बगीचा जो परम सुन्दर और सुखद माना जाता है।[46] भागवतपुराणानुसार इन्द्रपुरी अमरावती नन्दन वन से विभूषित और विख्यात है।[47] बाणभट्ट के अनुसार नन्दन वन आश्रितों को आनन्द देने वाले थे।[48] ऐसा कहा जाता है कि नन्दन वन एक विशाल और दुर्गम वन था जिसे रावण ने अपने पराक्रम से नष्ट कर दिया था।[49] कुमारसंभव में महाकवि कालिदास ने भी विध्वस्त नन्दन वन का वर्णन किया है - स्वामी कार्तिकेय ने इन्द्र के विलास के स्थल नन्दन वन को ध्वस्त देखा, जिसके साल के वृक्ष या तो तोड़ दिए गए थे या जड़ से ही उखाड़ दिए गए थे।[50] शिशुपालवध महाकाव्य में रावण के द्वारा स्वर्ग में नन्दन वन को छिन्न-भिन्न करने का उल्लेख प्राप्त होता है।[51]

ऐसा कहा जाता है कि ययाति ने नन्दन वन में इच्छानुसार रूप धारण करके अप्सराओं के साथ दस लाख वर्षों तक विहार किया। नन्दन वन के वृक्ष पवित्र सुगन्ध और मनोहर रूप वाले थे जो फूलों से लदे हुए रहते थे।[52] महाकवि वर्णन करते हैं कि राजहंस क्रीड़ा-उद्यान में दमयन्ती की सखियों के साथ क्रीड़ा करते हुए देखकर सोचता है कि इन्द्राणी, घृताची आदि अप्सरा भी सहचरियों के साथ इसी तरह नन्दन वन में आनन्द लेती होगी क्या?[53] महाकवि एक स्थल पर उल्लेख करते हैं कि नन्दन वन में कल्पद्रुमों की मनोहर सुगन्ध भ्रमरपंक्ति को सम्पूर्ण नन्दन कानन के वृक्ष समूहों से हटाकर अपने पास ले जाती है।[54] महाभारतानुसार अर्जुन ने सिद्धों और चारणों से सेवित उस रम्य अमरावती पुरी को देखा, जो सब ऋतुओं के कुसुमों से विभूषित पुण्यमय वृक्षों से सुशोभित थी। अर्जुन ने अप्सराओं से सेवित दिव्य नन्दन वन का भी दर्शन किया, जो दिव्य पुष्पों से भरे हुए वृक्षों द्वारा मानों उन्हें अपने पास बुला रहा था।[55] नैषधचरित में महाकवि वर्णन करते हैं कि संसार में वसन्तादि सब ऋतुएं क्रम से आती हैं लेकिन नन्दन वन में ऋतुओं का कोई क्रम नहीं है। सब ऋतुएं नन्दन वन को एक साथ विकसित कर देती है।[56]

महाभारतानुसार देवराज नहुष नन्दन वन के उपवनों में अप्सराओं और देवकन्याओं के साथ भाँति-भाँति की क्रीड़ा करते थे।[57] नन्दन वन नारद, गंधर्व और अप्सराओं को हमेशा प्रिय रहा है।[58] नैषधचरित के वर्णनानुसार आनन्द-क्रीड़ा, जल-उपवन-विहार आदि में वास्तविक आनन्द तभी आता है जब स्थल उपयुक्त हो और साथी भी अच्छे हो। इसलिए इन्द्र की दूती दमयन्ती से कहती है कि इन्द्र का वरण करने पर तुम्हें अपने देवर उपेन्द्र (विष्णु) तथा देवरानी लक्ष्मी के सान्निध्य में स्वर्गीय नन्दन उपवन में विहार करते समय अत्यन्त आनन्द प्राप्त होगा।[59]

महाभारत में उल्लेख किया गया है कि नन्दन वन मन और हृदय को आनन्द देने वाला था।[60] दमयन्ती के विरह में सर्वसामर्थ्यशाली स्वर्गराज इन्द्र आनन्ददायक नन्दन कानन में कोकिल स्वर होने पर भी आनन्द प्राप्त नहीं कर पा रहे थे।[61] ऐसा कहा जाता है कि जो मनुष्य सब प्रकार की हिंसा का त्याग करके जितेन्द्रिय भाव से आवर्तनन्दा और महानन्दा तीर्थ का सेवन करता है उसकी स्वर्गस्थ नन्दनवन में अप्सराएँ सेवा करती है।[62] एक अन्य स्थल पर उल्लेख किया गया है कि जब मनुष्य का भोग काल पूरा हो जाता है तब वे इसी वन में सुखपूर्वक विहार करने के लिए भेज दिए जाते हैं।[63] नैषधचरित में महाकवि श्रीहर्ष वर्णन करते हैं कि गङ्गा-यमुना के संगम स्थल पर जब क्षत्रिय वीर योद्धा देहत्याग करते हैं तो वे स्वर्ग जाकर नन्दन वन विहार और रम्भादि स्वर्गीय अप्सराओं के साथ आलिङ्गन का आनन्द प्राप्त करते हैं।[64]

3.6 वृन्दावन
यह वन मथुरा के समीप में स्थित है।[65] इसे मथुरा जिले का एक प्रसिद्ध प्राचीन तीर्थ भी कहा गया है।[66] वराहपुराण में मथुरा मण्डल के अन्तर्गत जिन बारह पवित्र वनों का उल्लेख किया गया है, उनमें वृन्दावन द्वादश वन है।[67] रघुवंश में वृन्दावन को चैत्ररथ नामक कुबेरोद्यान के समान सुन्दर बताया गया है।[68]

भागवतपुराणानुसार वृन्दावन नामक वन में छोटे-छोटे और भी बहुत से नये-नये हरे-भरे वन हैं। वहाँ बड़ा ही पवित्र पर्वत, घास और हरी-भरी लताएँ तथा वनस्पतियाँ हैं। पशुओं के लिए तो वह बहुत ही हितकारी है।[69] वहाँ वृन्दावन में बड़े-बड़े वृक्ष फल और फूलों के भार से झुककर अपनी डालियों और नूतन कोंपलों की लालिमा से उनके चरणों का स्पर्श करते हैं।[70] श्रीकृष्ण अपने सखा ग्वालाबालों के साथ गौएँ चराते हुए वृन्दावन में जाते हैं और अपने चरणों से वृन्दावन को अत्यन्त पावन करते हैं। आगे-आगे गौएँ, उनके पीछे बाँसुरी बजाते हुए श्यामसुन्दर श्रीकृष्ण, तदनन्तर बलराम और फिर श्रीकृष्ण के यश का गान करते हुए ग्वालबाल वृन्दावन में विहार करने के लिए जाते हैं।[71]

महाकवि श्रीहर्ष उल्लेख करते हैं कि वृन्दावन बहुत घना है परन्तु यह वन सर्पादि के भय से मुक्त है क्योंकि वृन्दावन के निकट गोवर्द्धन पर्वत है और गोवर्द्धन पर्वत पर मयूरमण्डली संचरण करती रहती है। सर्प मयूरों से डरते हैं इसलिए सर्प वृन्दावन से भाग जाते हैं। यह वही वृन्दावन है जहाँ कभी गोपाल कृष्ण विहार किया करते थे। ऐसे वृन्दावन में दमयन्ती पृथु राजा के साथ शंकारहित होकर वन-विहार की क्रीडा कर सकती है।[72] महाकवि आगे वर्णन करते हैं कि उस वृन्दावन की लताओं में प्रचुर मात्रा में पल्लव उगते हैं।[73] वृन्दावन में शीतल, मन्द और सुगन्धित पवन बहता है।[74]

उपरिलिखित तथ्यों से विदित होता है कि प्राचीनकाल से ही वन मनुष्य के जीवन में विशेष महत्त्व रखते हैं। वन मानव जीवन के लिए प्रकृति के अनुपम उपहार हैं। वन जीव-जन्तुओं की आश्रयस्थली होने के

साथ-साथ विभिन्न प्रकार की औषधियों से भरपूर हैं। वन पृथ्वी पर जीवन यापन के लिए अनिवार्य तत्व हैं। यह प्रकृति के संतुलन को बनाए रखने में पूर्णतया सहायक होते हैं। प्राचीन काल से ही वन हमारे पूर्वजों तथा ऋषियों-मुनियों के लिए प्रमुख तपस्थली रही है। प्रेमी युगल वनों में तरह-तरह की क्रीडाएँ करते थे। वृन्दावन में भगवान कृष्ण गोपियों के संग विहार करते थे।

सन्दर्भ

1. रामचन्द्र वर्मा, मानक हिन्दी कोश, पञ्चम खण्ड, पृ0, 10
2. व्रजबिहारी चौबे, संस्कृत वाङ्मय का बृहद् इतिहास, पृ0, 530
3. सूर्यकान्त, वैदिक कोश, पृ0, 22
4. अथ स्वामायाकृतमन्दिरोज्ज्वलं ज्वलन्मणि व्योमसदां सनातनम्।
   सुराङ्गना गोपतिचापगोपुरं पुरं वनानां विजिहीर्षया जाहुः।।
   किरातार्जुनीय, 8.1
5. यथायथं ताः सहिता नभश्चरैः प्रभाभिरुद्भासितशैलवीरुधः।
   वनं विशन्त्यो वनजायतेक्षणाः क्षणद्युतीनां दुधुरेकरूपताम्।। वही, 8. 2
6. सिक्ता इवामृतरसेन मुहुर्जनानां
   क्लान्तिच्छिदो वनवनस्पतयस्तदानीम्।
   शाखावसक्तवसनाभरणाभिरामाः
   कल्पद्रुमैः सह विचित्रफैर्विरेजुः।। शिशुपालवध, 5.16
7. वन्यैश्च फलमूलवारिभिर्वर्त्तयमाना। कादम्बरी, पृ0, 502
8. मरुत्प्रयुक्ताश्च मरुत्सखाभं तमर्च्यमारादभिवर्त्तमानम्।
   अवाकिरन्बालताः प्रसूनैराचारलाजैरिव पौरकन्याः।। रघुवंश, 2.10
9. स्फुरमाणनेत्रकुसुमोष्ठ दलमभृत भूभृदङ्घ्रिपैः।
   धूतपृथुभुजलतं चलितैर्द्रुतयात पातवनविभ्रमं सदः।। शिशुपालवध, 15.60
10. ततः प्रसूने च फले च मंजुले स सम्मुखीनाङ्गुलिना जनाधिपः।
    निवेद्यमानं वनपालपाणिना व्यलोकयत् काननरामणीयकम्।।
    नैषधचरित, 1.76
11. फलानि पुष्पाणि च पल्लवे करे वयोऽतिपातोद्गतवातवेपिते।
    स्थितैः समाधाय महर्षिवार्द्धकाद्वने तदातिथ्यमशिक्षिशाखिभिः।।
    लताऽबलालास्यकलागुरुस्तरुप्रसूनगन्धोत्करपश्यतोहरः।
    असेवतामुं मधुगन्धवारिणि प्रणीतलीलाप्लवनो वनानिलः।। वही, 1. 77,106
12. अनायि देशः कतमस्त्वयाद्य वसन्तमुक्तस्य दशां वनस्य।
    .... संज्ञा।। वही, 8.25
13. रामचन्द्र वर्मा, मानक हिन्दी कोश, द्वितीय खण्ड, पृ0, 22
14. अहम् ....।
    यस्य वासः कुरुक्षेत्रे खाण्डवे चाभवत् पुरा।।
    तं नागराजमस्तौषं कुण्डलार्थाय तक्षकम्।
    तक्षकश्चाश्वसेनश्च नित्यं सहचरावुभौ।। महाभारत, 1.3.139-140
15. एंववृतः स राजर्षिः श्वेतकिर्नृपसत्तमः।
    .... स्वर्गमभिष्टुतः।।
    ऋत्विग्भिः ....।
    तस्य सत्रे पपौ वह्निर्हविर्द्वादश वत्सरान्।।
    ततो भगवतो वह्नेर्विकारः समजायत।
    तेजसा विप्रहीणश्च ग्लानिश्चैनं समाविशत्।। वही, 1.222. 63-64,67
16. स लक्षयित्वा चात्मानं तेजोहीनं हुताशनः।
    जगाम सदनं पुण्यं ब्रह्मणो लोकपूजितम्।।
    पुरा देवनियोगेन यत् त्वया भस्मसात् कृतम्।
    आलयं देवशत्रूणां सुघोरं खाण्डवं वनम्।।
    तत्र सर्वाणि सत्त्वानि निवसन्ति विभावसो।
    तेषां त्वं मेदसा तृप्तः प्रकृतिस्थो भविष्यसि।। महाभारत, 1.222. 68,75-76
17. अर्जुनं वासुदेवं च यौ तौ लोकोऽभिमन्यते।
    तावेतौ सहितावेहि खाण्डवस्य समीपतः।।
    तौ त्वं याचस्व साहय्ये दाहार्थं खण्डवस्य च।
    ततो धक्ष्यसि तं दावं रक्षितं त्रिदशैरपि।। वही, 1.223.9-10
18. तद् वनं पावको धीमान् दिनानि दश पञ्च च।
    ददाह कृष्णपार्थाभ्यां रक्षितः पाकशासनात्।। वही, 1.227.46
19. तस्मिन् वने दह्यमाने षडग्निर्न ददाह च।
    अश्वसेनं .... तथा।।
    अश्वसेनोऽभवत् तत्र तक्षकस्य सुतो बली।
    स यत्नमकरोत् तीव्रं मोक्षार्थं जातवेदसः।।
    न शशाक स निर्गन्तुं निरुद्धोऽर्जुनपत्रिभिः।
    मोक्षयामास तं माता निगीर्य भुजगात्मजा।। वही, 1.227.47;226. 5-6
20. भगवांस्तत्र ....।
    अग्नये खाण्डवं दातुमर्जुनस्यास सारथिः।।
    सोऽग्निस्तुष्टो धनुरदाद्धयाञ्छ्वेतान् रथं नृप।
    अर्जुनायाक्षयौ तूणौ वर्म चाभेद्यमस्त्रिभिः।। भागवत पुराण, 10.58. 25-26
21. खाण्डववन-दिधक्षया कृत-कपट-बटु-वेश इव भगवान् पावकः। कादम्बरी, पृ0, 110
22. खाण्डव-विनाशोद्यतार्जुनमिव प्रारब्धाग्निकार्य्यम्। वही, पृ0, 124
23. अवलीढसनाभिरश्वसेनः प्रसभं खाण्डवजातवेदसा वा।
    प्रतिकर्तुमुपागतः समन्युः कृतमन्युर्यदि वा वृकोदरेण।। किरातार्जुनीय, 13.11
24. अतीतसङ्ख्या विहिता ममाग्निना शिलीमुखाः खाण्डवमत्तुमिच्छता।
    अनादृतस्यामरसायकेष्वपि स्थिता कथं शैलजनाशुगे धृतिः।। वही, 14.10
25. एष प्रतापनिधिरुद्गतिमान् सदाऽयं किं नाम् नार्जितमनेन धनञ्जयेन?।
    .... भास्वरूपसम्पत्।।
    नैषधचरित, 13.9 पर मल्लिनाथ की टीका (एष .... अनेन अग्निना कारणेन, किं किल, नार्जितम्? न लब्धम्? खाण्डवदहनकाले सन्तुष्टस्याग्नेः सकाशात् रथाक्षयतूणगाण्डीवादिकं प्राप्य पार्थेन विजित्य सर्वञ्च उपलब्धमेवेत्यर्थः .... नास्त्येव।।)
26. रामचन्द्र वर्मा, मानक हिन्दी कोश, द्वितीय खण्ड, पृ0, 277; हिन्दी विश्वकोश, सप्तम भाग, पृ0, 566
27. मंजुला जायसवाल, वाल्मीकि युगीन भारत, पृ0, 57
28. .... कुरवस्तूत्तरा इव।
    सर्वकालफला यत्र पादपा मधुरस्त्रवाः।।
    सर्वे च ऋतवस्तत्र वने चैत्ररथे यथा। रामायण, 3.73.7-8
29. सत्यसंधः शुचिर्भूत्वा प्रेक्षमाणः शिलावहाम्।
    अभ्यगात् स महाशैलान् वनं चैत्ररथं प्रति।। वही, 2.71.4
30. वनं चैत्ररथं दिव्यं नलिनीं नन्दनं वनम्।।
    विनाशयति यः क्रोधाद् देवोद्यानानि वीर्यवान्। रामायण, 3.32. 15-16
31. देवोद्यानानि च भवन्ति चत्वारि नन्दनं चैत्ररथं वैभ्राजकं सर्वतोभद्रमिति।।
    येषूवमरपरिवृढाः सह सुरललनाललामयूथपतय उपदेवगणैरुपगीयमानमहिमानः किल विहरन्ति।। भागवत पुराण, 5. 16.14-15
32. पत्युर्गिरीणामयशः सुमेरुप्रदक्षिणाद्भास्वदनादृतस्य।

दिशस्तमश्चैत्ररथान्यनामपत्रच्छटाया मृगनाभिशोभि।। नैषधचरित, 22. 29 पर मल्लिनाथ की टीका (चैत्ररथं कुबेरवनं .... उत्तरस्याः दिशो .... गिरीणां पत्युर्हिमाचलस्यायश एव।)
33. रामचन्द्र वर्मा, मानक हिन्दी कोश, तृतीय खण्ड, पृ0, 11
34. चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्मा, चरित्रकोश, पृ0, 201
35. तस्याञ्च दण्डकारण्यान्तः पाति सकलभुवनविख्यातम् उत्पत्तिक्षेत्रमिव भगवतो धर्म्मस्य। कादम्बरी, पृ0, 61
36. अनेक-दण्डकारण्यवासि-मुनिजन-शाप-सार्थमिव सञ्चरन्तम्। वही, पृ0 88
37. दण्डकारण्यमासाद्य पुण्यं राजन्नुपस्पृशेत्।
गोसहस्रफलं तस्य स्नातमात्रस्य भारत।। महाभारत, 3.85.41
38. अथ दाशरथिर्वीरो रामो नाम महाबलः।
.... वसुधातलम्।।
स पितुः प्रियमन्विच्छन् सहभार्यः सहानुजः।
सधनुर्धन्विनां श्रेष्ठो दण्डकारण्यमाश्रितः।।
तस्य भार्या जनस्थानाच्छलेनापहृता बलात्।
राक्षसेन्द्रेण बलिना रावणेन दुरात्मना।।
सुवर्णरत्नचित्रेण मृगरूपेण रक्षसा।
वञ्चयित्वा नरव्याघ्रं मारीचेन तदानघ।। वही, 3.147.31-34
39. स्मरत्यदो दाशरथिर्भवन्भवानमं वनान्ताद्वनितापहारिणम्।
पयोधिमाबद्धचलज्जलाविलं विलङ्घय लङ्कां निकषा हनिष्यति।।
शिशुपालवध, 1.68 पर मल्लिनाथ की टीका (स्मरतीति। .... वनान्ताद्दण्डकारण्याद्वनितापहारिणं सीतापहर्तारममुं रावणम् .... प्रथमः।)
40. चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्मा, चरित्रकोश, पृ0, 224
41. राणाप्रसाद शर्मा, पौराणिक कोश, पृ0, 243
42. इदं द्वैतवनं नाम सरः पुण्यजलोचितम्।
बहुपुष्पफलं रम्यं नानाद्विजनिषेवितम्।।
अत्रेमा द्वादश समा विहरेमेति रोचये।
यदि तेऽनुमतं राजन् किमन्यन्मन्यते भवान्।। महाभारत, 3.24. 10-11
43. ममाप्येतन्मतं पार्थ त्वया यत् समुदाहृतम्।
गच्छामः पुण्यविख्यातं महद् द्वैतवनं सरः।।
ततस्ते प्रययुः सर्वे पाण्डवा धर्मचारिणः।
ब्राह्मणैर्बहुभिः सार्धं पुण्यं द्वैतवनं सरः।। वही, 3.24.12-13
44. कथं द्वैतवने राजन् पूर्वमुक्त्वा तथा वचः।
भ्रातृनेतान् स्म सहितान् शीतवातातपार्दितान्।। वही, 12.14.8
45. श्रियः कुरूणामधिपस्य पालनीं प्रजासु वृत्तिं यमयुङ्क्त वेदितुम्।
स वर्णिलिङ्गी विदितः समाययौ युधिष्ठिरं द्वैवतने वनेचरः।।
किरातार्जुनीय, 1.1
46. रामचन्द्र वर्मा, मानक हिन्दी कोश, तृतीय खण्ड, पृ0, 195; नगेन्द्रनाथ वसु, हिन्दी विश्वकोश, एकादश भाग, पृ0, 389
47. रम्यामुपवनोद्यानैः श्रीमद्भिर्नन्दनादिभिः।
कूजद्विहङ्गमिथुनैर्गायन्मत्तमधुव्रतैः।। भागवत पुराण, 8.15.12
48. क्षमा भाज आश्रितनन्दन ....। हर्षचरित, पृ0, 69
49. विमानं पुष्पकं तस्य कामगं वै जहार यः।
वनं चैत्ररथं दिव्यं नलिनीं नन्दनं वनम्।।
विनाशयति यः क्रोधाद् देवोद्यानानि वीर्यवान्। रामायण, 3.32. 15-16
50. ततो व्रजन्नन्दननामधेयं लीलावनं जम्भजितः पुरस्तात्।
विभिन्नभग्नोद्धृतशालसङ्घं प्रेक्षांचकार स्मरशत्रुसूनुः।। कुमारसंभव, 13.33
51. पुरीमवस्कन्द लुनीहि नन्दनं मुषाण रत्नानि हरामराङ्गनाः।
विगृह्य चक्रे नमुचिद्विषा बली य इत्थमस्वास्थ्यमहर्दिवं दिवः।।
शिशुपालवध, 1.51
पर मल्लिनाथ की टीका (यो बली बलवान् रावणो नमुचिद्विषा इन्द्रेण .... इति।)
52. तथावसं नन्दने कामरूपी संवत्सराणामयुतं शतनाम्।
सहाप्सरोभिर्विहरन् पुण्यगन्धान् पश्यन् नगान् पुष्पितांश्चारुरूपान्।।
महाभारत, 1.89.19
53. अनुभवति शचीत्थं सा घृताचीमुखाभिर्न
सह सहचरीभिर्नन्दनानन्दमुच्चैः।
इति मतिरुदयासीत्पक्षिणः प्रेक्ष्य भैमीं
विपिनभुवि सखीभिस्सार्धमाबद्धखेलाम्।। नैषधचरित, 2.109
54. कल्पद्रुमान् परिमला इव भृङ्गमालामात्माश्रयां निखिलनन्दनशाखिवृन्दात्।
.... वीरान्।। वही, 13.1
55. ददर्श स पुरीं रम्यां सिद्धचारणसेविताम्।
सर्वर्तुकुसुमैः पुण्यैः पादपैरुपशोभिताम्।।
नन्दनं च वनं दिव्यमप्सरोगणसेवितम्।
ददर्श दिव्यकुसुमैराह्वयद्भिरिव द्रुमैः।। महाभारत, 3.43.1,3
56. षड्तवः कृपया स्वकमेककं कुसुममक्रमनन्दितनन्दनाः।
ददति षड् भवते कुरुते भवान् धुनुरिवैकमिषूनिव पञ्चतैः।।
नैषधचरित, 4.92
57. देवोद्यानेषु सर्वेषु नन्दनोपवनेषु च।।
अप्सरोभिः परिवृतों देवकन्यासमावृतः।
नहुषो देवराजोऽथ क्रीडन् बहुविधं तदा।। महाभारत, 5.11.13
58. सुपुष्पितं किन्नरराजजुष्टं प्रियं वनं नंदनं नारदस्य।
गंधर्वाणामप्सरसां च शश्वत् तत्र त्वाहं हस्तिनं यातयिष्ये।। वही, 13.102.23
59. मन्दाकिनीनन्दनयोर्विहारे देवे भवेद्देवरि माधवे च।
श्रेयश्श्रियां यातरि यच्च सख्यां तच्चेतसा भाविनि भावय त्वम्।।
नैषधचरित, 6.83
60. ते गन्धमादनवनं तन्नन्दनवनोपमम्।।
मुदिताः पाण्डुतनया मनोहृदयनन्दनम्।
.... शुभकाननम्।। महाभारत, 3.158.40-41
61. पिकस्य वाङ्मात्रकृताद्व्यलीकान्न स प्रभुर्नन्दति नन्दनेऽपि।
बालस्य चूडाशशिनोऽपराधान्नाराधनं शीलति शूलिनोऽपि।।
नैषधचरित, 8.64
62. पुनरावर्तनन्दां च महानन्दां च सेव्य वै।
नन्दने सेव्यते दान्तस्त्वप्सरोभिरहिंसकः।। महाभारत, 13.25.45
63. नगेन्द्रनाथ वसु, हिन्दी विश्वकोश, एकादश भाग, पृ0, 389
64. द्वेष्याकीर्त्तिकलिन्दशैलसुतया नद्याऽस्य यद्दोर्द्वयी -
कीर्त्तिश्रेणिमयी समागममगात् गङ्गा रणप्राङ्गणे।
तत्तस्मिन् विनिमज्जय बाहुजभटैरारम्भि रम्भापरी -
रम्भानन्दनिकेतनन्दनवनक्रीडादराडम्बरः।। नैषधचरित, 12.12
65. रामचन्द्र वर्मा, मानक हिन्दी कोश, पञ्चम खण्ड, पृ0, 106
66. वही, हिन्दी शब्दसागर, पृ0, 927
67. नगेन्द्रनाथ वसु, हिन्दी विश्वकोश, षोडश भाग, पृ0, 524
68. वृन्दावने चैत्ररथादनूने निर्विश्यतां सुन्दरि यौवनश्रीः।। रघुवंश, 6.50
69. वनं वृन्दावनं नाम पशव्यं नवकाननम्।
गोपगोपीगवां सेव्यं पुण्याद्रितृणवीरुधम्।। भागवत पुराण, 10.11.28
70. तन्मञ्जुघोषालिमृगद्विजाकुलं महन्मनःप्रख्यपयःसरस्वता।
वातेन जुष्टं शतपत्रगन्धिना निरीक्ष्य रन्तुं भगवान् मनो दधे।। वही, 10.15.3
71. ततश्च ....।
गाश्चारयन्तौ सखिभिः समं पदैर्वृन्दावनं पुण्यमतीव चक्रतुः।।

तन्माधवो वेणुमुदीरयन् वृतो गोपैर्गृणद्भिः स्वयशो बलान्वितः।
पशून् पुरस्कृत्य पशव्यमाविशद् विहर्तुकामः कुसुमाकरं वनम्।। वही, 10.15.1-2

72. गोवर्द्धनाचलकलापिचयप्रचारनिर्वासिताहिनि घने सुरभिप्रसूने।
तस्मिन् अनेन सह निर्विश निर्विशङ्कं वृन्दावने वनविहारकुतूहलानि।।
नैषधचरित, 11.107 पर मल्लिनाथ की टीका (गोवर्द्धनाचले .... तस्मिन् प्रसिद्धे यत्र पुरा गोपालमूर्तिः कृष्णो विजहारेति भावः, इत्यमरः।)

73. भावी करः कररुहाङ्कुरकोरकोऽपि तद्वल्लितपल्लवचये तव सौख्यलक्ष्यः।
अन्तस्त्वदास्यहृतसारतुषारभानुशोभानुकारिकरिदन्तजककङ्कणाङ्कः।। वही, 11.108

74. तज्जः श्रमाम्बु सुरतान्तमुदा नितान्त -
मुत्कण्टके स्तनयुगे तव सञ्चरिष्णुः
खञ्जन् प्रभञ्जनजनः पथिकः पिपासुः
पाता कुरङ्गमदपङ्किलमप्यशङ्कम्।। वही, 11.109